Anusandhanvallari
Vol 2023, No.1
September 2023
ISSN 2229-3388

# India and Non-Aligned Movement : A Study of Post Cold War Era

## भारत और गुटनिरपेक्ष आन्दोलन : शीतयुद्धोत्तर युग का अध्ययन

**डॉ० विनोद कुमार**

सीनियर एकेडमिक रिसर्च, पोस्ट डॉक्टोरेट, पीएच० डी०

एम० फिल० यू० जी० सी० नेट एवं व्याख्याता

राजनीति विज्ञान विभाग

राजकीय महाविद्यालय बहादुरगढ़।

**संक्षेपिका–** 1990 के दशक में पूर्व सोवियत संघ के विघटन एवं शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात संपूर्ण विश्व में राजनीतिक, आर्थिक एवं सामारिक दृष्टि से अनेक परिवर्तन हुए। संयुक्त राज्य अमेरिका दूनियां की नई महाशक्ति के रूप में उभरा और उदारवादी प्रवृतियों का उद्भव होने लगा। राजनीतिक मुद्दों की अपेक्षा आर्थिक गतिविधियों के साथ तकनीकी और वैज्ञानिक विकास पर बल दिया जाने लगा। इस प्रक्रिया के दौरान अनेक देशों ने अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए पूँजीवादी प्रतिमान को अपनाया जिसमें उदारीकरण निजीकरण तथा वैश्विकरण की नीतियाँ शामिल हैं। वैश्विक स्तर पर इन परिवर्तनों ने गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों एवं इससे जुड़े विद्वानों को इस वैश्विक संगठन की नवीन तथा बहुदिसात्मक भूमिका के बारे में विचार विमर्श करने पर विवश किया। इन्हीं बदलावों के उपरान्त गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का दसवां शिखर सम्मेलन जकार्ता में सितम्बर 1992 को सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में भारत ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय नेतृत्व द्वारा वैश्विक स्तर पर हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उभरती हुई नई विश्व व्यवस्था का प्रारूप प्रस्तुत किया जिसमें इस संगठन की प्रासंगिकता, विश्वव्यापी निरस्त्रीकरण, नाभिकीय प्रसार, तकनीकि हस्तान्तरण, संयुक्त राष्ट्र का पुनर्गठन, उत्तर–दक्षिण और दक्षिण–दक्षिण सहयोग जैसे अनेक विकासात्मक मुद्दों पर विकासशील देशों की आकांक्षाओं को अभिव्यक्ति दी। इसके अतिरक्त भारत ने गुटनिरपेक्ष देशों की सहायतार्थ एक असैन्य स्वयंसेवी बल गठित करने का सुझाव दिया। इस प्रकार के असैन्य स्वयंसेवी बल की सेवाओं का उपयोग सोमालिया तथा अन्य देशों में मानवता की रक्षा तथा कल्याणकारी कार्यों के लिए किया जा सकता है। भारत ने विभिन्न मसलों पर टकराव के बजाय निर्णायक दृष्टिकोण अपनाने का आह्वान किया। भारत द्वारा इस बात पर विशेष बल दिया गया कि गुटनिरपेक्ष सम्मेलनों की अब तक की कार्यवाहियों, गतिविधियों एवं अभिभाषणों से यह आभास होता है कि वैश्विक समस्याओं का समाधान होते हुए भी उनका हल ढूँढ़ने से बचा जाता रहा है। अतः इस सममेलन में इन्हीं प्रमुख बिन्दुओं का विश्लेषण किया गया है। यह लेख अन्तर्राष्ट्रीय जर्नल ऑफ अपलाईड रिसर्च, वा. 1 तथा अंक 13, 2015 में भी प्रकाशित है।

**संकेताक्षरः** सोवियत विघटन, उदारीकरण वैश्विकरण, निजीकरण, शीतयुद्धोतर, बहुपक्षवाद, एकध्रुवीय विश्व।

**शोध प्रविधिः** इस शोध पत्र को पूर्ण करने के लिए मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों का सहारा लिया गया है इनमें विभिन्न पत्रिकाओं में छपे लेख तथा अनेक पुस्तकें सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त इस संगठन से सम्बन्धित सम्मेलनों में पारित घोषणा पत्रों का भी सहारा लिया गया है। इस अध्ययन की कुछ सीमाएँ हैं जैसे यूरोसेंट्रिक दृष्टिकोण, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रों के वास्तविक व्यवहार एवं अनेक वास्तविक हितों का अवलोकन तथा एक सर्वमान्य वैश्विक सिद्धान्त की अभिव्यक्ति एवं सहमति का अभाव आदि। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र की विदेश नीति उसके घरेलू और बाह्य कारकों द्वारा प्रभावित होती है इसलिए राष्ट्रों का व्यवहार परिस्थितियों और वैश्विक घटनाक्रम द्वारा बदलता रहता है।

**प्रस्तावना–** गुटनिरपेक्षता भारत की विदेश नीति का प्रमुख सिद्धान्त रहा है तथा यह अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों में भारत की भूमिका का प्रमुख आधार है। गुटनिरपेक्षता की जड़े हमें भारतीय इतिहास एवं दर्शन में ''जीओ और जीने दो'' के सिद्धान्त के रूप में देखने को मिलती है जो कि शान्तिपूर्ण सहअस्त्वि, सहनशीलता और अनाक्रमण जैसे सिद्धान्तों पर आधारित है।[1] भारत ने गुटनिरपेक्षता को सबसे पहले अपनी विदेश नीति के रूप में अपनाया। भारत का मानना था कि गुटनिरपेक्षता का सिद्धान्त शान्ति स्थापित करने में सहायक होगा

तथा विश्व के निर्बल और छोटे राष्ट्रों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करते हुए विश्व की महाशक्तियों के एकछत्र रवैये का विरोध करेगा। भारत का यह भी विचार था कि इससे उनकी प्रतिष्ठा तथा प्रभाव में वृद्धि होगी और विश्व शान्ति की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।[2] इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त करते ही 1947 में नई दिल्ली में पहला एशियाई सम्मेलन आयोजित किया ताकि हालैंड के विरूद्ध इंडोनेशियायी हितों का समर्थन किया जा सके। इसके बाद 1955 में भारत ने बाण्डुंग सम्मेलन में भाग लिया। 1954 में चीन के साथ पंचशील की संधि पर हस्ताक्षर किये, 1946 में स्वेज नहर संकट के समय मिश्र को भरपूर समर्थन दिया। फ्रांस के मुकाबले अल्जीरियाई संघर्ष की आवाज बुलंद की, कोरियाई युद्ध में कैदियों की अदला–बदली की समस्या सुलझाने और युद्ध विराम करने में मदद की, भारत, चीन और लाओस के मुद्दे पर जिनेवा सम्मेलन आयोजित करने में सहयोग किया, कांगों में तैनात संयुक्त राष्ट्र सेनाओं में भागीदारी की, संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन के प्रवेश की लगातार पैरवी की और 1961 में गुटनिरपेक्ष देशों के बेलग्रेड सम्मेलन में यूगोस्लाविया और मिश्र के साथ मिलकर बडी शक्तियों के साथ संवाद बनाये रखने में रचनात्मक भूमिका का निर्वाह किया।[3]

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के माध्यम से भारत ने न केवल अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान को बनाए रखा, अपितु तीसरी दुनिया के देशों को शीत युद्ध की चपेट से भी बचाए रखा। इस व्यवस्था में सीधे महाशक्तियों का टकराव तो टला ही साथ ही इससे विकासशील राष्ट्रों के संघर्षों में भी कमी आई। जहाँ भारत ने अन्य राष्ट्रों के साथ मिलकर 'नई अन्तर्राष्ट्रीय विश्व व्यवस्था' की स्थापना के प्रयास से एक ओर विकसित राष्ट्रों से सौदेबाजी की, तो दूसरी ओर विकासशील राष्ट्रों के मध्य सहयोग को बढ़ाने पर बल दिया। इन गतिविधियों के साथ–साथ निरस्त्रीकरण की समस्या पर भी भारत ने विशेष ध्यान देते हुए इस दिशा में भरसक प्रयास किए। इन सब गतिविधियों में भारत की भूमिका बहुत सशक्त रही। भारत के नेताओं ने विभिन्न शिखर सम्मेलनों में बढ़ चढ़कर भाग लिया तथा संयुक्त राष्ट्र में भागीदारी, गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के कार्यक्रमों एवं नीतियों को कार्यान्वित करने आदि सन्दर्भो में कार्य करके इस आन्दोलन के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन सब बातों के अतिरिक्त शीतयुद्धोत्तर–युग में इसकी सार्थकता की चुनौतियों के मध्य इसको बनाए रखने की महत्वपूर्ण भूमिका में योगदान दिया तथा तीसरी दुनियां के महत्वपूर्ण आन्दोलन को जिन्दा रखा।[4] शीत युद्ध की समाप्ति के बाद गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में भारत की सशक्त भूमिका का आकलन इसके विभिन्न सम्मेलनों का समीक्षात्मक अध्ययन करने के बाद ही किया जा सकता है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यह शोध पत्र जकार्ता सम्मेलन में भारत की भूमिका का विश्लेषण करता है।

**जकार्ता सम्मेलन – 1992**

शीतयुद्धोतर काल में भारत को एक ऐसे विलक्षण सुरक्षा वातावरण का सामना करना पड़ रहा था जिसमें क्षेत्रीय स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय विकास के साथ कदम मिलाने में अक्षम थी। शीत युद्ध तो अचानक ही समाप्त हो गया था कुछ तो गोर्बाचोव की उदारवादी नीतियों के कारण और कुछ सोवियत संघ के स्वयं लुप्त हो जाने के कारण। अन्तर्राष्ट्रीय शत्रुता और तनाव का सर्वत्र फैला हुआ वातावरण समाप्त हो चुका था। परन्तु आपसी विरोधाभाष समाप्त नहीं हुआ था।[5] द्विध्रुवीय विश्व एकध्रुवीय हो रहा था तथा अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर नई भूमिका भारत का इंतजार कर रही थी। इसके साथ ही राजनीतिक और विचारधारात्मक रूप से पूरी दुनियां बदल रही थी। परन्तु भारत के भविष्य और विश्व मंच पर उसकी भूमिका के बारे में उसकी भविष्यवाणी प्रासंगिक बनी हुई थी।[6] इस संपूर्ण परिवर्तित परिदृष्य में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का दसवां शिखर सम्मेलन सितम्बर, 1992 में इण्डोनेशिया की राजधानी जकार्ता में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में 108 राष्ट्राध्यक्षों ने भाग लिया।[7] इस शिखर सम्मेलन का आयोजन उस समय हुआ जब यह आन्दोलन संकट के कठिन दौर से गुजर रहा था। विकासशील देशों के लिए दर्दनाक एवं घातक अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के बीच इस आन्दोलन का अध्यक्ष देश यूगोस्लाविया स्वयं अपनी पहचान के संकट में उलझा हुआ था। दुनियां में अनेक महत्वपूर्ण घटनाएं इस दौरान घट रही थी तथा खाड़ी युद्ध पहले ही इस आन्दोलन के लगाव की भारी कीमत अदा कर चुका था। सोवियत संघ के विघटन ने इस संकट को और उजागर कर दिया तथा स्थिति यहां तक आ गई थी कि इस आन्दोलन के प्रमुख सदस्यों ने बदलती हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में; आन्दोलन की वैद्यता पर ही संदेह व्यक्त किया।[8] मलेशिया के प्रधानमंत्री ने आन्दोलन के पुनः नामकरण की आवश्यकता पर बल दिया। उनका विचार था कि एकध्रुवीय विश्व में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन का फिर से नामकरण होना चाहिए ताकि बदलती हुई परिस्थितियों में यह आन्दोलन फिर से अपनी भूमिका निभा सके।[9] परन्तु भारत ने इस तरह के विचारों का दृढ़ता से विरोध किया और इस आन्दोलन के प्रभावशाली एवं प्रासंगिक बने रहने के लिए तर्क प्रस्तुत किए। भारतीय प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव ने अपने अभिभाषण में कहा कि ''चाहे एक समय में दो गुट हों, तीन हों या फिर एक भी न हो, स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए गुटनिरपेक्षता की आवश्यकता हमेशा बनी रहेगी। गुटनिरपेक्षता कभी भी अप्रासंगिक नहीं हो सकती। .... हममें से कोई भी राष्ट्र किसी भी गुट के साथ जुड़ना पसन्द नहीं करेगा। चाहे केवल एक ही गुट क्यों न हो। हम गुटनिरपेक्षता के गुणों पर सहमत हो सकते हैं परन्तु इसके साथ गुटबद्ध नहीं है। इसलिए आप गुटनिरपेक्षता से किस प्रकार पलायन कर सकते है?''[10] अतः गुटनिरपेक्षता के अतिरिक्त दूसरा कोई प्रतिमान नहीं है जिसके माध्यम से तृतीय विश्व के देश अपनी स्वतन्त्रता एवं सुरक्षा को बनाए रख सके।

राष्ट्रपति सुहार्तो ने संयुक्त राष्ट्र संघ के पुनर्गठन के लिए आवाज उठाई और इसके लिए एक उच्च स्तरीय समूह के गठन का तर्क प्रस्तुत किया जिससे यह संस्था सुचारू और लोकतान्त्रिक पद्धति से कार्य कर सके। उन्होंने कहा कि लगभग सभी गुटनिरपेक्ष राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ में विश्वास करते हैं और सभी को इसमें योगदान देना चाहिए।[11] बुतरसघाली ने संयुक्त राष्ट्र संघ की पुनः व्याख्या

के सम्बन्ध में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि यदि आप सुरक्षा परिषद के स्वरूप में परिवर्तन चाहते हैं तो पहले आपको घोषणा पत्र में संशोधन कराना होगा और घोषणा पत्र के अनुच्छेद 109 के अनुसार इसमें तब तक संशोधन संभव नहीं है जब तक कि इसके लिए इसके पाँच स्थाई सदस्य सहमत न हों। उन्होंने आगे कहा कि इसका एकमात्र तरीका यही है कि पांचों स्थाई सदस्यों को इस बात के लिए राजी किया जाए कि ऐसा संशोधन करना जरूरी है।[12] ईरान के राष्ट्रपति अकबर हाशमी रफसंजानी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि गुटनिरपेक्ष आन्दोलन को सामूहिक रूप से आधिपत्य के विरूद्ध आवाज उठानी होगी ताकि संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद के स्थाई सदस्यों वाली वर्तमान व्यवस्था को समाप्त किया जा सके। संयुक्त राष्ट्र संघ की निर्णय निर्माण प्रक्रिया एवं महत्वपूर्ण और संवेदनशील मामलों पर तृतीय विश्व की सहमति अनिवार्य है।'' उन्होंने आरोप लगाया कि मध्यपूर्व में विवाद का प्रमुख कारण संयुक्त राज्य अमेरिका और अन्य विदेशी शक्तियों द्वारा हस्तक्षेप है। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन को इस सम्बन्ध में यथार्थवादी एवं सैद्धान्तिक पहल करनी होगी।[13] तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री ने अपने भाषण में संयुक्त राष्ट्र संघ के योगदान को रेखांकित करते हुए कहा, ''हम यह जानकर अति प्रसन्न हैं कि संयुक्त राष्ट्र संघ अपने अस्तित्व के पांचवे दशक में प्रवेश कर रहा है और अभी तक इसके अन्तर्गत राष्ट्रों के अपने हित हावी नहीं हुए हैं। साथ ही हमें यह जानकर भी खुशी हो रही है कि संयुक्त राष्ट्र संघ पहले से अधिक सुदृढ़ हुआ है। अब प्रश्न यह है कि इसे और अधिक प्रभावशाली एवं मजबूत कैसे बनाया जाए। इसके लिए लोकतांत्रिकरण पहली प्राथमिकता है जिसके आधार पर इसका दायरा बढ़ाकर इसको और अधिक शक्तिशाली बनाया जा सकता है। ऐसा केवल साधारण सभा के सदस्यों की संख्या में परिवर्तन करके नहीं वरन् वैश्विक संरचना के अनुसार स्वरूप प्रदान करके इसे और अधिक शक्तिशाली बनाया जा सकता है। सुरक्षा परिषद के विभिन्न कार्य बहुमत की आवाज बुलंद करने वाले होने चाहिए।''[14] अतः संयुक्त राष्ट्र संघ में बदलते विश्व परिदृश्य के अनुसार निरन्तर सुधार की आवश्यकता है।

सम्मेलन के दौरान इन्डोनेशियाई मीडिया के समक्ष एक साक्षात्कार देते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री राव ने कहा कि वर्तमान विश्व व्यवस्था बहुपक्षवाद पर आधारित होनी चाहिए जो भेदभाव रहित एवं वैश्विक प्रतिनिधित्व की सूचक हो। साथ ही विकासशील राष्ट्रों को भी इसमें प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए।[15] इस सम्मेलन में एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू आर्थिक विकास एवं सहयोग से संबन्धित रहा। सदस्य राष्ट्रों ने अधिक मुक्त एवं बहुआयामी व्यापार प्रणाली सहित विकासशील देशों को बढ़ावा देने के लिए विदेशी आर्थिक माहौल में सुधार करने तथा उनके आर्थिक उदारीकरण के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए उन्हें सक्षम बनाने की मांग की। शिखर सम्मेलन ने विदेशों से सीधे पूंजी निवेश आमंत्रित कर अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं को सुदृढ़ करके विकासशील देशों में पूंजी प्रवाह को और अधिक बढ़ाने की मांग की। पिछले दस वर्षो में विकासशील देशों में विदेशी कर्ज का बोझ बढ़कर 1400 खरब डालर हो गया था। शिखर सम्मेलन ने इस कर्ज की वसूली, उपज में वृद्धि और विकास के लिए इन देशों के लिए व्यापक कर्ज राहत की भी मांग की।[16] भारत ने इस प्रकार की दयनीय स्थिति से मुक्ति पाने के लिए प्रभावशाली विकल्प प्रस्तुत किया। भारत का विचार था कि सदस्य राष्ट्रों को पारस्परिक रूप से आर्थिक और तकनीकी क्षेत्रों में सहयोग करना चाहिए। राव ने अपने सम्बोधन में कहा कि ''विकासशील राष्ट्रों को विकसित देशों के इस जंजाल को तोड़ने के लिए अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन करना होगा। दक्षिण–दक्षिण सहयोग की दिशा में सर्वप्रथम दक्षिण को दक्षिण का सम्मान करना होगा।''[17] राव ने एशियाई और अफ्रीकी देशों के विभिन्न नेताओं के साथ आर्थिक सहयोग बढ़ाने पर भी विचार विमर्श किया तथा उन्होंने समूह–15 देशों के संगठन को सक्रिय किये जाने की आवश्यकता पर बल दिया ताकि दक्षिणी देशों के मध्य सहयोग के लिए पहल की जा सके। यहां पर समूह–15 की गतिविधियों को प्रोत्साहन देने के सन्दर्भ में सभी अफ्रीकी और एशियाई नेताओं ने अपनी सहमति जताई और एक छोटे से सचिवालय का भी सुझाव रखा जो समूह–15 की गतिविधियों को संचालित कर सके।[18]

सम्मेलन के अन्तिम घोषणा पत्र में भारतीय संशोधनों को स्वीकार करते हुए समान रूप से सभी राष्ट्रों ने आतंकवाद, विशेष रूप से दूसरे देशों द्वारा प्रायोजित आतंकवाद, की निंदा की और पर्यावरणीय मैत्रीपूर्ण तकनीकों को विकासशील देशों को स्थानांतरित करने हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय कोष की स्थापना का प्रस्ताव पारित किया गया। गृह सुरक्षा कोष का प्रस्ताव सर्वप्रथम 1989 में भारत के प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने बेलग्रेड शिखर सम्मेलन में प्रस्तुत किया था और इसका समर्थन करते हुए राव ने इस सम्मेलन में कहा कि ''पर्यावरण के प्रति मैत्रीपूर्ण तकनीकों का व्यापक स्तर पर विकास होना चाहिए तथा प्राकृतिक स्रोतों के दोहन पर आधारित तकनीकों पर तत्काल प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए।''[19] भारत ने इस बात पर भी जोर दिया कि विकसित राष्ट्रों से विकासशील राष्ट्रों को पर्यावरण के प्रति मैत्रीपूर्णतकनीकों का गैर व्यावसायिक स्तर पर स्थानांतरण होना चाहिए तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस प्रकार के कोष की स्थापना होनी चाहिए ताकि पर्यावरणीय आधार मजबूत तकनीकों को खरीदने एवं स्थानांतरण की व्यवस्था की जा सके। विशेष रूप से विकासशील राष्ट्रों में यह प्रक्रिया यथाशीघ्र शुरू होनी चाहिए। भारत ने सदस्य राष्ट्रों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया कि विकसित राष्ट्र विकासशील राष्ट्रों की विभिन्न वस्तुओं पर प्रतिबन्ध लगाते जा रहे हैं जिससे विकासशील राष्ट्र लाभप्रद तकनीकों से वंचित हो रहे हैं। इस तरह के प्रतिबन्धों में संगणक से लेकर रासायनिक एवं चिकित्सकीय उपकरणों तक पर प्रतिबन्ध लगाए गए हैं। ये प्रतिबन्ध शस्त्रों के प्रसार के नाम पर लगाए जाते हैं। जबकि शस्त्रों का प्रसार करने में वे देश ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो इस प्रकार के प्रतिबन्धों की पैरवी करते हैं जो कि पूर्ण रूप से अन्यायपरक हैं।[20] इस प्रकार की कार्यवाहियों से छोटे राष्ट्र निश्चित रूप से प्रभावित हो रहे हैं।

आतकंवाद के संदर्भ में भारत ने ट्यूनीशियन प्रस्ताव का भी समर्थन किया जिसमें बढ़ते हुए आतंकवाद के विभिन्न रूपों पर चिंता व्यक्त की गई। केवल धार्मिक ही नहीं बल्कि प्रजातीय एवं पंथबद्ध हिंसा, जो कि संगठित रूप से व्यक्तिगत एवं समूहगत प्रयासों द्वारा

धार्मिक एवं सांस्कृतिक भावनाओं को आधार बनाकर विध्वंसक लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं और इस प्रकार मानवीय एवं नैतिक अधिकारों पर कुठाराघात करते हुए स्वतंत्रता और सहिष्णुता को नुकसान पहुंचाते हैं। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार विश्व के प्रत्येक भाग में आतंकवाद मानव जाति के लिए सबसे बड़े खतरे के रूप में उभरकर सामने आया है। हत्या, जबरन वसूली तथा अन्य साधनों द्वारा आतंकवादियों तथा उनसे सम्बन्धित संगठनों ने निर्दोष नागरिकों के मानवीय अधिकार छीन लिये हैं तथा स्वतंत्र एवं प्रजातान्त्रिक संस्थाओं को निर्दयतापूर्वक नुकसान पहुंचाने की प्रक्रिया भी आतंकवादियों ने अपनाई है। आतंकवाद का चेहरा तब और कुरूप हो जाता है जब इसे दूसरे देशों द्वारा पोषित एवं प्रायोजित किया जाता है। अर्थात एक देश दूसरे देश के विरूद्ध आतंकवादी कार्यवाही के लिए अपनी भूमि का प्रयोग करने की अनुमति प्रदान करता है। यह निश्चित रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ के नियमों के विरूद्ध है।[21] इस सम्मेलन में एक अन्य संशोधन के द्वारा सभी राज्यों से यह अपील की गई कि वे अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का पालन करते हुए किसी भी देश द्वारा संगठित करने, समर्थन देने तथा एक देश द्वारा दूसरे देश के विरूद्ध आतंकवाद को प्रश्रय देने की प्रक्रिया जैसी गतिविधियों को रोका जाना चाहिए। ट्यूनिशिया भी प्रायोजित आतंकवाद का सामना कर रहा है, जहाँ पर धार्मिक कट्टरवादी, सरकार की स्थिरता एवं राष्ट्र की एकता के समक्ष गहरी चुनौती प्रस्तुत कर रहे हैं। भारत के अथक प्रयास से ही इस संदर्भ में गठित राजनीतिक समिति द्वारा आतंकवाद के विरूद्ध प्रस्ताव पारित किया गया।[22] इस सम्मेलन में मुख्य रूप से इस बात पर जोर दिया गया कि सदस्य देशों को मिलकर आतंकवाद को समाप्त करने के लिए प्रयास करने चाहिए।

भारत ने गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों से एक विश्वव्यापी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया जो परमाणु निरस्त्रीकरण सहित सभी प्रकार के जन संहारक हथियारों को पूर्ण रूप से समाप्त करने पर बल दे। इसके साथ ही इस बात पर भी बल दिया कि विश्व से परमाणु हथियार समाप्त करने के लिए विश्व स्तर पर प्राथमिक रूप से एक स्वस्थ दृष्टिकोण का निर्वाह अनिवार्य है। केवल तभी इस व्यापक लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।[23] यद्यपि बहुत सारे भारतीय संशोधनों को वैश्विक स्तर पर समर्थन मिला, विशेष रूप से रासायनिक हथियारों की समाप्ति के संदर्भ में सभी राष्ट्रों ने सहमति जताई, लेकिन आणविक मुक्त क्षेत्र के मुद्दे पर भारत को समर्थन नहीं मिला। परमाणु मसले पर एक प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए कहा गया कि सभी राष्ट्रों को शान्तिपूर्ण परमाणु ऊर्जा के विकास के लिए तकनीक, उपकरण एवं आवश्यक सामग्री प्राप्त करने का अधिकार है। लेकिन इस मुद्दे पर भारत को कठिन दौर से गुजरना पड़ा क्योंकि सऊदी अरब और मिश्र भारत के इस प्रस्ताव का विरोध कर रहे थे। हालांकि भारत इस प्रस्ताव के माध्यम से यह कहना चाहता था कि विकसित राष्ट्र विकासशील राष्ट्रों के शान्तिपूर्ण ऊर्जा प्राप्त करने के कार्यक्रम को दबाव एवं भय से रोकना चाहते हैं,[24] परन्तु इस प्रस्ताव को विरोध के कारण अन्तिम दस्तावेज में स्थान नहीं मिल सका।

एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा जिस पर भारत ने स्वतंत्र विचार रखे वह था अफ्रीकी कोष। अफ्रीकी कोष की स्थापना हरारे शिखर सम्मेलन में रंगभेद के विरूद्ध लड़ने के लिए की गई थी। राव ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था कि कोष के संसाधनों की स्थिति इसे जारी रखने के लिए हमें प्रोत्साहित नहीं करती। सदस्य राष्ट्रों के द्विपक्षीय वार्ताओं के माध्यम से इस प्रकार की समस्या का समाधान किया जा सकता है। उन्होंने महसूस किया कि कोष ने उन उद्देश्यों को पहले ही प्राप्त कर लिया है जिन पर यह आधारित था। रंगभेद की समाप्ति के लिए अफ्रीका में श्वेत अल्पसंख्यक शासन के विरूद्ध सफलतापूर्वक कार्यवाही की गई है। उन्होंने कहा कि इस कोष की स्थापना के समय आक्रमण और साम्राज्यवाद इसके प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किए गए थे, अब वे उद्देश्य प्राप्त कर लिए गए हैं।[25] राव ने आशा व्यक्त की कि गुटनिरपेक्ष राष्ट्र दक्षिण अफ्रीका में कोष के लक्ष्यों की प्राप्ति के बाद भी स्वतंत्रता आन्दोलन को निरंतर सहायता प्रदान करते रहेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि कोष की शेष राशि का उपयोग दक्षिण अफ्रीका के सूखा प्रभावित देशों को मानवीय सहायता प्रदान करने के लिए, स्वतंत्रता सबंधी आन्दोलनों को सहायता प्रदान करने के लिए, मानवीय संसाधनों के विकास के लिए तथा मतदाताओं को शिक्षित करने के लिए किया जाना चाहिए।[26]

**निष्कर्ष:** संक्षेप में भारत ने इस सम्मेलन में सक्रिय तथा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारत ने बदलती हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में आन्दोलन को प्रासंगिक बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया, मिश्र द्वारा आन्दोलन को समूह–77 में मिलाने का कड़ा विरोध किया तथा इसको गतिशील बनाने के अनेक सुझाव प्रस्तुत किए। सम्मेलन के अन्तिम घोषणा पत्र में भारत द्वारा किए गए संशोधनों को स्वीकार किया गया जिसकी स्पष्ट झलक अन्तिम दस्तावेज में प्रकट हुई। इस अंतिम दस्तावेज में आतंकवाद, मानवाधिकार, संयुक्त राष्ट्र संघ का पुनर्गठन, आर्थिक सहयोग आदि भारतीय प्रस्तावों को शामिल किया गया। इसके अतिरिक्त भारत ने बदलते हुए विश्व में विकासशील देशों की स्थिति को स्पष्ट रूप से रेखाँकित करते हुए बताया कि अभी भी अल्पविकसित राष्ट्रों के हालात दयनीय तथा संक्रमण की स्थिति में हैं। इसलिए सभी सदस्यों का दायित्व है कि वे अन्तर्राष्ट्रीय वास्तविकताओं को आकार देने, परिभाषित करने, परिवर्तनों के अनुकूल ढलने और सभी उपयुक्त रणनीतियों तथा दृष्टिकोणों को स्पष्ट और कार्यान्वित करने में अपने देश की क्षमताओं के अनुरूप अपनी उचित भूमिका निभाएं। इसलिए इस व्यापक दायित्व को विश्व की अन्य महाशक्तियों पर नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि नई विश्व व्यवस्था अभी भी वैश्विक दक्षिण के लिए एक मृगतृष्णा एवं खोखली घोषणाओं का प्रपंच साबित हुई है। भारत ने इस संगठन के सभी सदस्यों के समक्ष इस प्रस्ताव को समतावादी दृष्टिकोण के साथ रखा कि विकासशील देश ही नहीं बल्कि विश्व के अन्य गरीब और अल्पविकसित राष्ट्र भी लगातार, असंतुलित आर्थिक विकास तथा गरीबी से प्रभावित हो रहे हैं और यह प्रक्रिया इसलिए चली आ रही है क्योंकि विकसित राष्ट्र एक तरफ उदारीकृत विश्व की बात करते हैं दूसरी ओर प्राकृतिक संसाधनों, भूमि, जल तथा वायु का दौहन पर्यावरणीय संरक्षण की तकनिकों की अवहेलना कर रहे है। जिससे अनेक संकट उत्पन्न हो रहे हैं और इसके लिए गरीब राष्ट्रों को दोषी ठहराया जा रहा है। उपरोक्त प्राकृतिक संसाधन संपूर्ण मानवजाति की साझी धरोहर हैं अतः विश्व में

स्थाई शान्ति, सुरक्षा तथा प्रत्येक प्रकार की विकासात्मक गतिविधियों के संक्रिय संचालन तथा कार्यान्वयन के लिए समान अवसर तथा सामूहिक दायित्व अनिवार्य है केवल तभी बदलते वैश्विक परिदृष्य में ये राष्ट्र अपना अस्तित्व बचा पाएंगे।

**संदर्भ**

1. एस०बी० जैन, **इंडिया'ज फॉरेन पॉलिसी एण्ड नॉन–अलाइनमेंट,** अनामिका पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2000, पृ० 304.
2. वही.
3. राजनी कोठारी, **भारत में राजनीतिः कल और आज,** वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ० 414.
4. आर०एस० यादव, **भारत की विदेश नीतिः एक विश्लेषण**, किताब महल, नई दिल्ली, 2005, पृ० 622.
5. वी०पी० दत्त, **बदलती दुनियां में भारत की विदेश नीति,** हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2003, पृ० 30.
6. कोठारी, **संख्या** 3 पृ० 434
7. **किसिंग रिकाड़र्स ऑफ वर्ल्ड इवेन्ट्स,** वॉ० 38, नं० 9, सितम्बर 1992, पृ० 39122
8. दत्त, **संख्या** 5, पृ० 31
9. चिन्तामणी महापात्र, ''रेलिवेन्स ऑफ नैम इन प्रेजेन्ट–डे इंटरनैशनल पॉलिटिक्स'', **लिंक,** वॉ० 35, नं० 5,13 सितम्बर 1992, पृ० 32
10. एस० विश्वम्, ''रेलिवेन्स ऑफ नैम टुडे,'' **वर्ल्ड फोकस,** वॉ० 13, नं० 11–12, दिसम्बर 1992, पृ० 22.
11. झु क्विंग्चेंग, ''टेन्थ नैम सम्मिट अचिवमेन्ट्स'', ''**लिंक, वॉ०** 35, नं०14, 15 नवम्बर, 1992, पृ० 22.
12. ''प्रेशर मॉऊट्स ऑन नैम टू एक्ट'', **पैट्रीऑट,** नई दिल्ली, 5 सितम्बर, 1992.
13. **एशियन रिकॉर्डर,** वॉ० **XXXVII,** नं० 42, 14–20 अक्टूबर, 1992, पृ० 22643.
14. भारत के प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव द्वारा दसवें गुटनिरपेक्ष सम्मेलन में दिया गया भाषण, टैन्थ नैम समिट् : **सलैक्टेड डॉक्यूमैन्टस,** इंडियन इंस्टीट्यूट फॉर नॉन अलाईड स्टडीज, नई दिल्ली, 1992, पृ० 17–18.
15. गिरीश माथुर, ''इंडिया थ्रू द जकार्ता समिट्स,'' **लिंक,** वॉ. 35, नं० 5, 13 सितम्बर, 1992, पृ० 29.
16. दत्त, **संख्या 5**, पृ० 34.
17. राव, **संख्या 14**, पृ० 15–16.
18. रेणु श्रीवास्तव, **इण्डिया एण्ड दा नॉन अलाईंड समिट्स : बेलग्रेड टू जकार्ता,** नार्थन बुक सैन्टर, नई दिल्ली, 1995, पृ० 137.
19. एशियन रिकार्डर, **संख्या 13,** पृ० 22648.
20. ''पूर्ण निरस्त्रीकरण की जरूरतः राव'', **नवभारत टाइम्स,** नई दिल्ली, 3 सितम्बर 1992.
21. के०टी० मैनन, ''नैम डिक्लरेशन रिफ्लेक्ट्स इंडिया'ज व्यूज ऑन मैनी इश्यूज,'' **टाइम्स ऑफ इंडिया**, नई दिल्ली, 8 सितम्बर 1992.
22. बंसीधर प्रधान, ''द जकार्ता नैम समिट् : एन असेसमैन्ट'' **लिंक,** वॉ० 35, नं० 5, 13 सितम्बर, 1992, पृ० 28.
23. ''नैम एण्ड इंडिया'', **लिंक,** वॉ० 35, नं० 4–6, सितम्बर, 1992, पृ० 3.
24. एशियन रिकार्डर, **संख्या** 13, पृ० 22646.
25. के०पी० मिश्र, नॉन अलाईंड मूवमेंट बैक ऑन रेल्सः ए स्टडी, **इन्टरनेशनल स्टडी,** वॉ० 30, नं० 1, जनवरी–मार्च, 1993, पृ०12.
26. ''फाइनेंसियल क्राइसिस फोरसिज क्लोजर ऑफ अफ्रीका फण्ड : टैन्थ नॉन–अलाईंड समिट्स,'' **टैलिग्राफ**, कलकता, 2 सितम्बर, 1992.